16 भारतीय संस्कृति में गुरु-शिष्य संबंध



आनंदशंकर माधवन

श्री आनंदशंकर माधवन का जन्म केरल प्रदेश के क्विलन जिले में हुआ। डॉ. जाकिरहुसेन के संपर्क में आने से हिन्दु-मुस्लिम के मधुर संबंधों के पक्षधर बन गए। महात्मा गांधी के भारत छोड़ो आंदोलन में भी माधवनजी का सक्रीय सहभाग रहा। जेल में रहकर हिन्दी भाषा का अध्ययन किया। जेल से छूटकर आप भारतभ्रमण को निकल पड़े और बाद में बिहार में मंदार विद्यापीठ की स्थापना की। सन् 1984 में 'अद्वैत मिशन' और सन् 1985 में शिवधाम अभिनव शिक्षा नगरी की स्थापना की। अब आप तीनों संस्थाओं के संचालक है। मलयालम तथा तमिल दोंनो ही भाषाओं पर पूर्ण अधिकार होने के बावजूद आपने हिंदी साहित्य में सृष्टि की। आपके विषयों में दार्शनिकता, आधुनिकता एवं आध्यात्मिकता का बाहुल्य है। 'बिखरे हीरे', 'अनलशलाका', 'हिंदी आंदोलन', 'आमंत्रित मेहमान', 'आरती', 'उषा', 'संजीवनी' आदि आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं। 'आमंत्रित मेहमान' बिहार राष्ट्रभाषा परिषद द्वारा पुरस्कृत है।

माधवनजी ने प्राचीन गुरु-शिष्य-परंपरा की गरिमा को स्पष्ट करते हुए वर्तमान शिक्षा प्रणाली पर परोक्ष रूप में करारा व्यंग्य किया है। हमारे समाज में व्यावसायिक संस्कृत का बोलबाला है। इस कारण गुरु-शिष्य संबंधों में परिवर्तन आया है। पहले विद्यालय मंदिर के समान माने जाते थे। शिक्षा देना एक आध्यात्मिक अनुष्ठान था। वह परम सुख प्राप्ति का एक माध्यम था। उस जमाने में पैसे देकर शिक्षा खरीदी नहीं जाती थी। क्या आज वैसी स्थिति है? क्या आज शिक्षा के क्षेत्र में वहीं निष्ठा, वही त्याग नजर आता है? लेखक ने हमें अंतर्मुख होकर सोचने के लिए बाध्य किया है।

हमारे समाज में व्यावसायिक संस्कृति का बोलबाला है, इसी कारण गुरु-शिष्य संबंधों में परिवर्तन आया है। पहले विद्यालय मंदिर के समान माने जाते थे। शिक्षा देना एक आध्यात्मिक अनुष्ठान था। वह परमेश्वर प्राप्ति का एक माध्यम था। पैसे देकर शिक्षा खरीदी नहीं जाती थी। आज स्थिति बिलकुल बदल गई है और अब शिक्षणकार्य पेट पालने का साधन बन गया है।

जिसे भारतीय संस्कृति कहा जाना चाहिए वह आज भारतीय मानसिक क्षितिज में क्रियाशील नहीं है। आज एक प्रकार की अव्यवस्थित व्यावसायिक संस्कृति व्याप्त है जिसकी जड़ शायद यूरोप में है। भारतीयों के सार्वजनिक व्यवहार में गुरु-शिष्य संबंध का भी तद्नुरूप परिवर्तन हो गया है। यहाँ गुरु वेतनभोगी नहीं होते थे और न शिष्य को ही शुल्क देना पड़ता था। पैसे देकर विद्या खरीदने की यह क्रय-विक्रय पद्धति/निस्संदेह उस भारतीय मिट्टी का उपज नहीं है। शिक्षणालय एक प्रकार के आश्रम अथवा मंदिर के समान थे। गुरु को साक्षात् परमेश्वर ही समजा जाता था। शिष्य पुत्र से अधिक प्रिय होते थे। यहाँ सम्मान मिलना ही शक्ति पाने का रहस्य है। प्राचीन काल में गुरु की शिक्षादान क्रिया उनका आध्यात्मिक अनुष्ठान थी, परमेश्वरप्राप्ति उनका एक माध्यम था। वह आज पेट पालने का ज़रिया बन गई है।

प्रारंभ में विवेकानंद को भारत में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं हुआ पर जब उन्होंने अमेरिकन नाम कमा लिया तो भारतवासी दौड़े मालाएँ लेकर स्वागत करने! रवीन्द्रनाथ ठाकुर को भी नोबल पुरस्कार मिला तो बंगाली लोग दौड़े यह राग अलापते हुए - अमादेर ठाकुर अमादेर कठोर सुपूत...। दक्षिण भारत में कुछ समय पहले तक भरतनाट्यम् और कथकली को नहीं पूछता था, पर जब उसे विदेशों में मान मिलने लगा तो आश्चर्य से भारतवासी सोचने लगे अरे, हमारी संस्कृति में इतनी अपूर्व चीजें भी पड़ी थीं क्या...। यहाँ के लोगों को अपनी खूबसूरती नहीं नजर आती; मगर पराए के सौंदर्य को देखकर मोहित हो जाते हैं। जिस देश में ज्ञान पाने के लिए मैक्समूलर ने जीवनभर प्रार्थना की उस देश के निवासी आज जर्मनी और विलायत जाना स्वर्ग जाने जैसा अनुभव करते हैं। ऐसे लोगों को प्राचीन गुरु-शिष्य संबंध की महिमा सुनाना गधे को गणित सिखाने जैसा व्यर्थ प्रयास ही हो सकता है।

एक बार सुप्रसिद्ध भारतीय पहलवान गामा मुंबई आए। उन्होंने विश्व के सारे पहलवानो को कुश्ती में चैलेंज दिया। अखबारों में यह समाचार प्रकाशित होते ही एक पारसी पत्रकार ने उत्सुकतावश उनके निकट पहुँचकर उनसे पूछा, 'साहब, विश्व के किसी भी पहलवान से लडने के लिए आप तैयार हैं तो आप अपने अमुक शिष्य से ही लड़कर विजय प्राप्त करके दिखाओ। गामा आजकल के शिक्षाक्रम में रंगे नहीं थे। इसलिए उन्हें इन शब्दोंने हैरान कर दिया। आँखे फाड़कर उस पत्रकार का चेहरा ताकते ही रह गए। बाद में धीरे से कहा, ''भाई साहब, मैं हिंदुस्तानी हूँ। हमारा अपना एक निजी रहन-सहन है। शायद इससे आप परिचित नहीं है। जिस लड़के का आपने नाम लिया,

वह मेरे पसीने की कमाई, मेरा खून है और मेरे बेटे से भी अधिक प्यार है इसमें और मुझमें फ़रक़ ही कुछ नहीं है। मैं लड़ा या वह लड़ा, दोनों बराबर ही होगा। हमारी इस परंपरा को आप समझने की चेष्टा कीजिए। हम लोगों को वंशपरंपरा से शिष्य परंपरा अधिक प्रिय है। ख्याति और प्रभाव में हम सदा यह चाहते हैं कि हम अपने शिष्यों से कम प्रभावी रहें। यानी हम यही चाहेंगे कि संसार में जितना नाम मैंने कमाया उससे कहीं अधिक मेरे पिता कमाएँ। मुझे लगता है, आप हिंदुस्तानी नहीं है...।''

भारत में गुरु-शिष्य संबंध का वह भव्य रूप आज साधुओं, पहलवानों और संगीतकारों में थोड़ा बहुत ही सही, पाया जाता है। भगवान रामकृष्ण बरसों योग्य शिष्य को पाने के लिए प्रयत्न करते रहे। उनके जैसे व्यक्ति को भी उत्तम शिष्य के लिए रो-रोकर प्रार्थना करनी पड़ी थी। इसे समझा जा सकता है कि एक गुरु के लिए उत्तम शिष्य कितना महँगा और महत्त्वपूर्ण है। संतान प्राप्ति वर्ग उन्हें दु:ख नहीं देता पर बगैर शिष्य के रहने के लिए वे एकदम तैयार नहीं होते। इस संबंध में भगवान ईसा का एक कथन सदा स्मरणीय है। उन्होंने कहा था, 'मेरे अनुयायी लोग मुझसे कहीं अधिक महान है और उनकी जूतियाँ होने की योग्यता भी मुझमें नहीं है।' यही बात है, गांधीजी बनने की क्षमता जिनमें है उन्हें गांधीजी अच्छे लगते हैं और वे ही उनके पीछे चलते भी हैं। विवेकानंद सिर्फ़ उन्हें पसंद आयेगें जिनमें विवेकानंद बनने की अद्‌भुत शक्ति निहित है।

कविता के मर्मज्ञ और रसिक स्वयं कवि से अधिक महान होते हैं। संगीत के पागल सुननेवाले ही स्वयं संगीतकार से अधिक संगीत का रसास्वादन करते हैं। यहाँ पूज्य नहीं, पुजारी ही श्रेष्ठ है। यहाँ सम्मान पानेवाले नहीं, सम्मान देनेवाले महान हैं। स्वयं पुष्प में कुछ नहीं है, पुष्प का सौंदर्य उसे आनेवाले की दृष्टि में है। दुनिया में कुछ नहीं है, जो कुछ भी है हमारी चाह में, हमारी दृष्टि में है। यह अद्‌भुत भारतीय व्याख्या अजीब-सी लग सकती है, पर हमारे पूर्वज सदा इसी पथ के यात्री रहे हैं।

उत्तम गुरु में जातिभावना भी नहीं रहती। कितने ही मुसलमान पहलवानों के हिंदू चेले हैं और संगीतकारों के मुसलमान शिष्य रहे हैं। यहाँ परख गुण की, साधना की और प्रतिभा की होती भक्ति और श्रद्धा की ही कीमत है, न कि जातिसंप्रदाय, आचार-विचार या धर्म की। मुझे क्या लिखाया था एक विद्वान मुसलमान ने ही। उन्होंने कभी नहीं सोचा कि यह हिंदू है और मुसलमान बनाना चाहिए। पुराने जमाने में मौलवी लोग बड़े-बड़े रामाणी होते थे और आज देहांतों में भरत मियाँ, रंजीत मियाँ आदि अधिक संख्या में दिखाई देते हैं।

आज के गुरु भी सिर्फ़ सेवा लेने में ही चतुर हैं, देने में नहीं। उपनिषदों में आचार्यों ने कहा, सेवा देने की चीज है, लेने की नहीं'। सेवा लेने के अधिकारी बच्चे, रोगी, असहाय और वृद्ध बच्चों को परमेश्वर का ही मूर्त रूप समझ। सेवा रूपी पूजा से उनकी शक्ति को प्रज्वलित करने क्षमता और सहृदयता रखनेवाले ज्ञानी और तपस्वी पुरोहित आजकल के गुरु नहीं रह गए। किसी भी देवमंदिर की मूर्ति की शक्ति उतनी मात्रा तक ही संभव है जितनी मात्रा तक उसके पुजारी की भावपूजा में नैवेद्‌यभावना भरी रहती है।

शब्दार्थ और टिप्पणी

परिवर्तन बदलाव **सुप्रसिद्ध** सर्वश्रेष्ठ **निजी** अपना **उत्तम** श्रेष्ठ **अनुयायी** शिष्य

मुहावरे

गधे को गणित सिखाना व्यर्थ प्रयास करना **ताकते रहना** आश्चर्य से देखते ही रहना **पसीने की कमाई** कठिन परिश्रम का फल **रंग जाना** (किसी काम में) निमग्न होना

स्वाध्याय

1. निम्नलिखित प्रश्नों के एक-एक वाक्य में उत्तर लिखिए :

(1) प्राचीन काल में भारतीय शिक्षा केन्द्र कैसे थे?

(2) जब रवीन्द्रनाथ ठाकुर को नोबल पुरस्कार मिला तब बंगाली लोग कौन-सा राग आलापने लगे?

(3) भगवान रामकृष्ण बरसों तक योग्य शिक्षा पाने के लिए क्या करते थे?

(4) भगवान ईसा का कौन-सा कथन सदा स्मरणीय है?

(5) गांधीजी किन्हें अच्छे लगते है?

2. निम्नलिखित प्रश्नों के विस्तार से उत्तर लिखिए :

(1) युरोप के प्रभाव के कारण आज गुरु-शिष्य संबंधो में क्या अंतर आया है?

(2) पुजारी की शक्ति मूर्ति में कैसे विकसित होने लगी?

(3) विवेकानंद और रवीन्द्रनाथ ठाकुर को इस देश में अधिक महत्त्व कब मिला?

3. आशय स्पष्ट कीजिए :

(1) सम्मान पानेवालों से सम्मान देनेवाले

(2) ''जो गुरु से मार खाते हैं उनका भविष्य उज्जवल होगा ही।''

4. सूचना के अनुसार काल परिवर्तन कीजिए :

(1) इसमें ओर मुजमें फ़रक ही कुछ नहीं है। (भविष्यकाल)

(2) हम अपने शिष्यों से कम प्रमुख रहें। (पूर्ण भूतकाल)

(3) उपनिषदों में आचार्यों ने कहाँ है। (सामान्य भूतकाल)

5. मुहावरों का अर्थ देकर वाक्यप्रयोग कीजिए :

ताकते रहना, पसीने की कमाई, रंग जाना

6. विरुद्धार्थी शब्द लिखिए :

रोगी, असहाय, वृद्ध

योग्यता-विस्तार

विद्यार्थी-प्रवृत्ति

- पढ़ो हिन्दी, बोलो हिन्दी में और जोड़ो भारत निबंध का लेखन कीजिए।

शिक्षक-प्रवृत्ति

- **परिसंवाद :**

  (1) 'गुरु-शिष्य संबंध' कल और आज

  (2) वर्तमान शिक्षा में अनुशासन का महत्त्व

●